ग्रन्थाङ्कः—३९

श्रीराधाकृष्णतत्त्व ।

गोस्वामिकुलकौस्तुभ श्री १०८ श्री गोकुलनाथजी महाराजकी

आज्ञानुसार

पुष्टिमार्गकार्यालय बडामंदिर बम्बईसे प्रकाशित ।

व्याख्याता

भट्ट श्रीरमानाथ शास्त्री

संवत् १९८३ वल्लभाब्द ४४८

मुद्रक-प्रभाशंकर जयशंकर पाठक धी जगदीश्वर प्रिंटिंग प्रेस
गिरगांव गायवाडी घर नं. ९ मुंबई.

प्रकाशक-भट्ट श्रीरमानाथ श्रीद्वारकानाथ शर्मा त्रिजो भोईवाडा
बडा मंदीर मुंबई नं. २.

आवृत्ति १ ली.] सन १९२७. [प्रति १०००

नोट—आ पुस्तक स्वर्गवासी बाई जीवीबाई ते स्वर्गवासी भगवानदास मोरलीधरनी विधवा तरफथी छपावीने वितरण करवामां आव्युं छे.

विजयते श्रीबालकृष्ण प्रभुः ।

श्रीराधाकृष्ण तत्त्व ।

वक्ता—देवर्षि भट्टश्रीरमानाथशास्त्री शुद्धाद्वैतभूषण ।

श्रीविट्ठलनाथ प्रादुर्भाव महोत्सव.

ध्येयं सदा परिभवघ्नमभीष्टदोहं तीर्थास्पदं शिवविरंचिनुतं शरण्यम् ।
भृत्यार्तिहं प्रणतपाल भवाब्धिपोतं वन्दे महापुरुष ते चरणारविन्दम् ॥

सभापति महोदय ! एवं भाग्यवान् वैष्णव वृन्द !

आज मेरा व्याख्यान श्री राधाकृष्ण तत्त्वपर है । मेरे व्याख्यानका मूल श्रीहरिरायजीकी कारिका और श्रीमद्भागवतकी टीका श्रीसुबोधिनीजी हैं । में चाहता हूं पहले उन दोनोंका दिग्दर्शन करा दूं और में अपने व्याख्यानका फिर प्रारम्भ करूं ।

काचिद्भगवतः सिद्धिरस्ति राधस्शब्दवाच्या ।
न तादृशी सिद्धिः क्वचिदन्यत्र । नवा ततोऽप्यधिका ।
तया सिद्धया भगवान् स्वगृह एव रमते । तच्चाक्षरात्मकं ब्रह्म ।
इत्यादि । सुबोधिनी भाग–द्वि. स्कं. ४ अ. १४ श्लो. ।

सदा श्रुतीनां कृपया मूलरूपप्रदर्शकः ।
रसात्मकस्वरूपात्मगोपीजनसमन्वितः ॥
यथा ह्यग्निसुतान्सर्वान्कृपया कोसलेन्द्रतः ।
अ[illegible]ा स्वरूपात्मभक्तावेशं विधाय च ।
तदा तद्रूपतापत्तिर्मूललीला परायणः ।
यथा वा पूर्वरूपेऽपि स्वयमाविश्य सर्वतः ॥
मलरूपेण कृतवांल्लीलास्तद्वत्स्वयं हरिः ।
तथा श्रुतिषु सर्वासु भावात्मा स्वीयरूपताम् ॥
संपाद्य मूलरूपेण रमते तादृशीषु वै ।
उभयोर्भावरूपत्वं मन्तव्यं ब्रह्मवादिभिः ।
मुख्यशक्तिस्वरूपं तु स्त्रीभावो हरिरुच्यते ॥
तत्र स्त्र्यंशः पराशक्तिर्भावांशः कृष्णशब्दितः ।
यथा हि सर्वभावात्मा कृष्णः साऽपि च तादृशी ॥
इत्यादि श्रीहरिरायचरणाः ।

वैष्णव गण भारतवर्षमें ऐसा कौन धार्मिक पुरुष है कि जिसका **'राधाकृष्ण'** इस पवित्र नामसे परिचय न हो । हमारा धार्मिक समाज श्रीराधाकृष्णको बडी पूज्य दृष्टिसे देखता है । ऐसा कौनसा धार्मिक ग्रहस्थ होगा जिसके घरमें श्रीराधाकृष्णका चित्र न होगा । भारतवर्षके बडे बडे विद्वानोने वेदादि शास्त्रोंका पूर्ण विचार कर यही दो परतत्त्व ढूंढ निकाले हैं ।

जिन्होंने वेदादि तथा श्रीमद्भागवत आदि पुराणोंका श्रद्धापूर्वक विचार एवं समन्वय नहीं कर पाया ये लोग श्रीकृष्ण या श्रीराधिकाके तत्त्वको नहीं समझ सक्ते । जिन लोगोंके हृदयमें लौकिक भावनायेंही भर रही हैं ऐसे लोगही श्रीराधाकृष्णके विषयमें आक्षेप करते हैं । कृष्णके स्वरूप और लीलाका विशद वर्णन श्रीमद्भागवतमें है और श्री श्रीराधिकाका तत्व अन्य पुराणोंमें है । किन्तु श्रीमद्भागवत एवं पुराणोंके यथार्थ स्वरूपका समझानेवाला एक श्रीवल्लभाचार्यके सिवाय अन्य कोई अभीतक मेरी दृष्टीमें नहीं आया । मैने बहुतसी टीका टिप्पण संदर्भ और प्रबन्ध देखे हैं किन्तु उन सबमें या तो राधाकृष्णके विषयमें अन्यभाव होता है या कुछ न्यूनता रह जाती है ।

श्रीराधाकृष्णके विषयमें थोडा अन्यभाव तो कुछ टीकाकारोनें किया है । उनसे विशेष अन्याय मूर्ख कथावालोंने एवं भाषान्तर कर्ता और स्वतंत्र प्रबन्ध लेखकोंनें तथा आजकलके प्राकृत रासलीलावालोंने किया है । और सबसे बढकर श्रीराधाकृष्णका अपमान तो इन चित्र-लेखकोंने कर दिखाया है ।

एक दृष्टान्तही काफी होगा । चीरहरण लीला, श्रीकृष्णलीलामें प्रसिद्ध है । उसका मूल यहांसे प्रारम्भ है ।

हेमन्ते प्रथमे मासि नंदव्रजकुमारिकाः ।
चेरुर्हविष्यं भुञ्जानाः कात्यायन्यर्चनव्रतम् ॥ श्रीभा०

मूलमें '**कुमारिका**' शब्द है । उसका अन्य टीकाकार कुछ अर्थ फेर करते हैं । भाषान्तर कर्ता कुछ कर देते हैं और चित्रकार तो कम्बख्त कुछका कुछ कर देते हैं । '**कुमारिका**' शब्दका अर्थ है स्त्रीवाचक '**बच्चा**' । (चिल्ड्रन) । इस जगह श्रीमद्भागवत सुबोधिनीमें श्रीवल्लभाचार्य लिखते हैं '**कन्यकाः**' । जिसका अर्थ होता है आठ या सात वर्षकी छोरी ।

अब मूल और इस टीकाको देखो और फिर बजारमें विकते चित्रोंको देखो जमीन आस्मानका फरक दिखाई देगा ।

हरएक समाज और सम्प्रदायमें उसकी प्रारम्भिक अवस्थासे ही अविद्वत्पक्ष और विद्वत्पक्ष दो पक्ष चले आते हैं । अविद्वत्पक्षका कार्य है सत्य वस्तुको ढांकना, और विद्वत्पक्षका कार्य है सत्यका प्रकाश करना । खास श्रीमद्वल्लभाचार्यके मतमेंभी ये दो पक्ष हैं । इनका

स्वरूप हम समय पर दिखावेंगे । किन्तु इतना कह देना यहां उचित है कि इस अविद्वत्पक्षने श्रीमद्वल्लभाचार्यके सिद्धान्तोंको रूपान्तर दे दिया है । किन्तु मेरा यह कार्य नहीं है । मैं श्रीमद्वल्लभाचार्यके सिद्धान्तको सत्यस्वरूपमें ही प्रकाशित करूंगा ।

श्रीमद्वल्लभाचार्यका कार्य है वैदिक सिद्धान्तका सत्यरूपमें प्रकाश करना । श्रीवल्लभाचार्यनें अनेक सत्य पदार्थोंका प्रकाश किया है । श्रीराधा और श्रीकृष्ण सत्यकाभी श्रीवल्लभाचार्यने जैसा प्रकाश किया है उस रूपमें मुझे अभीतक अन्यत्र दिखाई नहीं पडा है । वेदमें और श्रीमद्भागवतमें श्रीराधाका सूत्ररूपसे वर्णन है तो श्रीवल्लभाचार्यने भी उन्हें उसी सूक्ष्मरूपसें प्रकाशित किया है ।

'रसो वै सः' '**आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्**' '**सत्यं विज्ञानमानन्दं ब्रह्म**' '**पतिश्च पत्नी चाभवताम्**' इत्यादि श्रुतियोने यद्यपि 'परोक्षप्रिया ह वै देवाः' इस श्रुत्युक्त न्यायसे परोक्षमें श्रीराधाकृष्णका वर्णन कर दिया है तथापि में आज इस विषयको रस-शास्त्रकी मर्यादासे कहना चाहता हूं ।

आनन्दका ही नामान्तर '**रस**' है । रस सुख और आनन्द एकही पदार्थके नाम हैं । रस दो प्रकाराका है, लौकिक और अलौकिक । अलौकिक आनन्द रस है । और लौकिक आनन्दकोही लोकमें काम कह

देते हैं। रस, स्वार्थरहित, अगाध, अमेय, अनिर्देश्य, परमपवित्र, और जीवनप्रद होता है। **'को ह्येवान्यात्कः प्राण्याद्यदेष आकाश आनन्दो न स्यात्'**। किन्तु काम, स्वार्थवाला, मैला परिच्छिन्न, और नाशोन्मुख होता है।

आनन्द सर्व रसोमें व्याप्त है, अतएव रस शास्त्रमें शृंगारको मूल और प्रधान माना है। साहित्य शास्त्रज्ञोंने श्रीकृष्णकोही रसका पूर्ण आश्रय माना है। क्योंकि वह स्वयं रसस्वरूप है। मूलरूप रसस्वरूप इस परात्पर वस्तुका प्रत्यक्ष दर्शन तबही होता है जब वह स्वयं श्रुतीयोंपर कृपाकर लोकमें प्रकट होता है। रसात्मक और उसमेंभी विप्रयोग रसात्मक इस परात्पर श्रीकृष्ण वस्तुका लोकमें प्रत्यक्ष दिखाई देना अति दुर्लभ है। क्योंकि वह सर्वान्तर है। निगूढ है और रसरूप है। रसका स्वरूपही अनिर्देश्य अनुभव गोचर है। अनुभव रसका आधार है। अनुभूति संवित् ब्रह्म अक्षर प्रभृति सब नाम अनुभवकेही हैं, और इसीलिये भागवत द्वितीयस्कंधमें कहा है कि—

'स्वधाम्नि ब्रह्मणि रंस्यते नमः'। श्रीशुकः।

अक्षर ब्रह्मरूप अपने मन्दिरमें रमण करते श्रीपुरुषोत्तमको (श्रीकृष्णको) मैं नमन करता हुं।

यद्यपि रसको लाक्षिक शब्दसे कहना, इसकी आबरू घटाना है

तथापि यदि किसीको समझानाही पडे तो आनन्द या रसको मज़ा या स्वाद शब्दसे किसी तरह कहभी सक्ते हैं। मज़ा या स्वादका आश्रय अनुभव है। मज़ा अनुभवके बिना रहताही नहीं। और वह आनन्दानुभव नित्यं सिद्ध है इसलिये सत् है। और इसीलिये पर तत्त्वको सच्चिदानन्द कहते हैं।

श्रुतिगण इस अनुभवगम्य रसका निरूपण करना चाहती है किन्तु कर नहीं सकती। क्योंकि रसका स्वरूपही ऐसा है कि वह सम्पूर्ण रीतिसे वाणीमें नहीं आसक्ता। किसी रसशास्त्र वेत्ताने कहा है कि—

आविर्भावदिने न येन गणितो हेतुस्तनीयानपि
क्षीयेतापि न चापराधविधिना नत्या न यद्वर्धते।
पीयूषप्रतिवादिनस्त्रिजगतीदुःखद्रुहः साम्प्रतं
प्रेम्णस्तस्य गुरोः किमद्य करवै वाङ्निष्ठतालाघवम्॥

प्रेमभी रसकी एक किरण है। जब प्रेमही वाणीमें नहीं आसक्ता तो आनन्द तो शब्द गोचर कैसे हो सक्ता है। वेदकी श्रुतियां चाहती हैं कि इस परात्पर मूलस्वरूप रसका हम वर्णन करें किन्तु नहीं कर सक्तीं। तब मिलकर उस आनन्द स्वरूपके शरण जाती हैं। बृहद्वामन पुराण और ब्रह्मवैवर्त पुराणमें यह कथा प्रसिद्ध ह कि सब श्रुतियां रसरूप भगवान्का अनुभव करनेकी प्रार्थना करती हैं। तब

वह आनन्द इन्हे वरदान देता है कि तुम व्रजमें गोपीरूपसे प्रगट होगी और वहां मेरा अनुभव तुम्हे होगा। इस तरह श्रुतियोंपर कृपा कर जब यह परात्पर रस, लोकमें साकार प्रकट होता है तब वह श्रीकृष्ण कहा जाता है। लोकमें प्रकट होने पर रसही श्रीकृष्ण है। और वही श्रीपुरुषोत्तम है।

रसशास्त्रने रसको दो प्रकारका माना है। संयोग और विप्रयोग। रसकीही कई अवस्थायें होती हैं। शान्त, उद्बुद्ध, अत्युद्बुद्ध, प्रभृति। रसकी प्रारम्भिक शान्त अवस्थाको भाव कहते है। यह भाव रसपर्यन्त इकसार रहता है इसलिये यह भावही स्थायी कहाता है। भावकी उद्बुद्ध अवस्थाको संयोग रस कहते हैं। और अत्युद्बुद्ध या उद्वेल्लित अवस्थाको विप्रयोगरस कहते ह। भावही जब अगणित लहरी संवलित, उद्वेल, और अमेय हो जाता है तब वह विप्रयोग रस कहलाता है। उस समय सम्पूर्ण विश्वम वह रसही रस प्रकट हो जाता है। अतएव व्यापक है और परब्रह्म है। रस जब पूर्णताको प्राप्त होता है तब वहां प्रपञ्चकी विस्मृति हो जाती है। भागवतके फल प्रकरणमें इसका रूप इस तरह कहा ह।

तन्मनस्कास्तदालापास्तद्विचेष्टास्तदात्मिकाः।
तद्गुणानेव गायन्त्यो नात्मागाराणि सस्मरुः ॥ भा. १० स्कं.

अस्मरणे हेतवः, 'तन्मनस्का' इत्यादिभिः। स्मृतिर्मनसि जायते, तन्मनस्तु भगवत्येव। .....अन्यद्वाराप्यस्मरणार्थमाह—तदालापाः। .....तस्मिन्भगवत्येवालापो यासाम्। .....ननु दैहिकी क्रिया क्षुत्पिपासाकृता आवश्यकी, तया देहादिस्मरणं भविष्यतीति चेत्तत्राह—तद्विचेष्टाः। तस्यैव भगवतः पूर्ववच्चेष्टाविष्टाः। ननु सर्वज्ञानेष्वात्मांशः स्फुरति 'घटमहं जानामि',..... कथमात्मास्फूर्तिः। तत्राह—तदात्मिकाः। सर्वदा कृष्णात्मभावनैव चित्ते सहजा तासाम्। ननु 'सदृशादृष्टचिन्ताद्याः स्मृतिबीजस्य बोधकाः' इति अदृष्टवशात्कथं न स्मृतिः तत्राह—तद्गुणानेव। यतस्तस्य गुणानेव गायन्ति। गुणैः कृत्वा दुरदृष्टं नश्यति। श्रीसुबोधिनी।

जो रसव्याकुल लोग जिस पुष्टिके आवेशमें आकर, लोक वेद मूर्तिपूजा श्राद्ध मुक्ति और अक्षर प्रभृतिकी अवहेलना करते हैं, समझदार लोग इस श्लोकपरसे उस पुष्टिका, और इन स्वेच्छाचारियोंके स्वरूपका विचार स्वयं कर लें।

रसकी उस उद्वेल्लित अवस्थामें गुणगानभी ज्ञानसे नहीं किन्तु बेहोशीमेंही अपने आप न जाने कैसे होते रहते है। यह मूल रसस्वरूप भगवान् है। उसे रसशास्त्रनेही नहीं किन्तु सम्पूर्ण उपनिषदोंने अनिर्देश्य माना है। 'यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह।' इस तरह अपने मूलस्वरूपका अनुभव करानेके लिये उस रसने कितनीही श्रुतियोंको जिन गोपियोंके रूपमें पृथ्वीपर प्रकट किया वे श्रुतिरूपा गोपी हैं। इन श्रुतिरूपा गोपियोंका एक यूथ ह।

एक बात और है । दण्डकारण्यवासी ऋषियोंकोभी प्रभुनें वर दिया था । वेदकी श्रुतियोंको ऋषिभी कहते हैं । उन श्रुतियोंको प्राप्त करनेवाले तपस्वी लोग ऋषि कहे जाते हैं । ये ऋषि दण्डकारण्यवनमें रहते थे, जब मर्यादित रसस्वरूप श्रीरामचन्द्र वहां पधारे तो सब ऋषियोंके हृदयमें प्रभुके मूलस्वरूपके अनुभव करनेकी आई । और उन्होंने प्रभुसे प्रार्थना की । तदनुसार अपने स्वरूपका अनुभव करानेके लिये सारस्वत कल्पमें जिनको गोपीस्वरूपमें प्रकट किया ये अग्निकुमार किंवा ऋषिरूपा गोपी हैं । इनकाभी एक यूथ है ।

यह हम प्रथम कहचुके हैं कि मूलरस अनन्त लहरीं युक्त हैं । रसशास्त्रमें रसकी लहरी, मनोरथ भावनायें मानी गई हैं । इसमें अनन्त भावनायें होतीं हैं यह स्वभावसिद्ध नित्यसिद्ध बात है । जब वह रस लोकमें श्रीकृष्णस्वरूपसे प्रकट होता है तब उसकी वे लहरें गोपी रूपसे प्रकट होतीं हैं । वे नित्यसिद्धा गोपीयां हैं । रससामान्य या रससमुद्र जब श्रीकृष्ण हैं तो भावव्यक्तियां उसीकी अनेकांश गोपियां हैं ।

इन्हींको हम दूसरी तरह सिद्ध करना चाहते हैं । रसही भाव या भावनारूप धारण करता है । इस भवन (होने) को सिद्धि कहते हैं । और इसेही **'राधस्'** (राधा) कहते हैं । संस्कृतज्ञोंके लिये राधस् राधा या सिद्धि शब्दके आपसमें पर्याय होनेमें कोई आश्चर्य नहीं हैं । तद्भावापत्तिकोही राधस् या सिद्धि कहते हैं । सिद्धिशब्दका

प्रकृतिप्रत्यानुकूल तात्पर्य यह है कि वह रसात्मा भगवान्ही सिद्धिस्वरूपमें सिद्ध हुआ है । अथवा यों कहो कि अनंत शक्तिमान् प्रभूनेही महाशक्ति या शक्तिसामान्यका स्वरूप धारण किया है । यह मुख्या शक्ति या महासिद्धिही श्रीराधा हैं । इसेही रसमर्यादासे कहें तो यों कहना पडेगा कि रसकी महाभावना स्वरूप श्रीराधिका हैं । रसको जब अपने स्वरूपका आनन्द लेना होता है तब वह राधास्वरूप धारण करता है । रसके साथ भावनाका विवाह करनेकी जरूरत नहीं है । वह तो नित्यसिद्ध है । अत एव श्रीराधिका प्रभुकी नित्यसिद्धा स्वामिनी हैं । इस **राधस्को** मूलमें निरस्तसाम्यातिशय कहा है । सो ठीकही है । क्यों कि भावनाके बराबर या विशेष रसको आनन्द देनेवाला दूसरा कोई हैही नहीं । उससे विशेष या बराबर यदि कोई है तो वह रसही है, और वह तो उसका स्वरूपभूतही है । इसलिये राधस्का निरस्तसाम्यातिशय होना उचितही है । और इसीसे भाषा साहित्यमें ' तेरो मुख नीको के मेरो राधा प्यारी ' आदि साम्यध्वनिको लियें हुए अलंकार युक्त अष्टसखाओंके पद हैं । इस महासिद्धि या सिद्धिसामान्यकेही अनेक अंश सिद्धिव्यक्तियां हैं । और येभी नित्यसिद्धा हैं । ये नित्यसिद्धा गोपी और पूर्वोक्त नित्यसिद्धा एकही हैं ।

रस शास्त्रमें भावनायें दो प्रकारकी होती हैं । आश्रयनिष्ठ और सामाजिकनिष्ठ । आश्रयनिष्ठ स्वीय हैं और सामाजिकनिष्ठ परकीय हैं । यदि नल दमयन्ती आदि आश्रयोंमें भावनाकी स्थिति न मानी जाय तो सामाजिकोंको रसकी उत्पत्तिही न हो । अत एव भावना उभयनिष्ठ हैं ।

सिद्धिमेंभी येही दो भेद समझ लेने चाहिये। भगवद्भक्तोनेभी दो प्रकारकी स्वामिनी मानी हैं । अन्यपूर्वा और अनन्यपूर्वा। अनन्यपूर्वा स्वीया सिद्धिस्वरूपा हैं और अन्यपूर्वा परकीया सिद्धि हैं । श्रीराधिका उभयात्मिका हैं। और इसीलिये उनके विषयमें भक्तोंके दो मत हैं। यह व्याख्यानही स्वतन्त्र है ।

वह मूलरूप अपनी उन सिद्धियोंमे पहले अपने स्वरूपका स्थापन करता है तदनन्तर रमण करता है । ठीक है, भावना रस हो ले तब रसका और उसका ऐक्य हो । यहभी विषय स्वतन्त्र है इसलिये इसे हम यहीं छोडते हैं।

मूलरसरूप श्रीकृष्णके हृदयमें अनेक भावनायें हैं, ये भावना समूह श्रीराधिका हैं। और श्रीराधिकाके हृदयमेंभी अनेक भावनायें हैं ये श्रीकृष्णात्मक है। एकके हृदयमें स्त्रीरूप है, अपरके हृदयमें पुरूषरूप है यही हमारे आराध्य **श्रीराधाकृष्ण** युगलस्वरूप हैं । दोनों नित्य सिद्ध हैं।

यहां यह प्रश्न होता है कि श्रीभागवतमें श्रीकृष्णको प्राधान्य है और अन्य पुराणोमें श्रीराधा या महाशक्तिको प्राधान्य है, दोनोमें किसको प्रधान माना जाय । इसका उत्तर यही है कि जिस भावसिन्धुकी चन्द्रादि उद्दीपनके द्वारा उद्वेलता हो जाय उस समय वही प्रधान है। ऐसी अवस्थामें दोनों प्रधान हो सक्ते हैं । अतएव किसी सम्प्रदायमें

श्रीराधिकाको प्रधान माना है तो किसी सम्प्रदायमें श्रीकृष्णको मुख्य माना है। दोनो एकही हैं तब कहना क्या।

श्रीमद्भागवतमें श्रीराधिका का इतना सूक्ष्म वर्णन है इसका कारण इतनाही है कि श्रीमद्भागवत पारमहंस्य संहिता है इसमें श्रीकृष्णहीको प्राधान्य है । और ठीक है, वेदादिसिद्ध शुद्धाद्वैतमें कृष्णाद्वैत होनाही उचित है, रसकीही लहर भावना है, भावनाकी लहर रस नहीं। शक्तिमान्के वर्णनमें शक्तिका वर्णन आजाता है । अतएव श्रीराधिकाका विशद वर्णन भागवतमें नहीं किंया । और दूसरी बात यह है कि श्रीराधिका का विशाल वर्णन पुराणान्तरोंमें आही चुका है फिर श्रीमद्भागवतमेंभी उनका वर्णन करनेका इतना प्रयोजन नहीं। और वास्तवमें देखो तो 'काचित्' प्रभृति शब्दों द्वारा श्रीराधिका का परोक्ष वर्णन यहांभी है। यह मैने श्रीराधाकृष्णतत्त्वका सत्य निरूपण किया है। यदि इसके द्वारा आप लोगोंकी श्रीराधाकृष्णमें भक्ति होगी तोमें आपना श्रम सफल समझूंगा। इसी प्रकारमें किसी समय '**श्रीकृष्ण जन्मका रहस्य**' और '**रासलीला तत्त्व**' रूप सत्यका प्रकाश करूंगा । श्रीरस्तु ।

समाप्त.

श्रीबालकृष्णपुस्तकालयकी मुद्रापित सांप्रदायिक पुस्तकें

संस्कृत.	रु.आ.
श्रीबालकृष्णचम्पू ...	२–०
अणुभाष्य पञ्चटीकासहित	३–०
साष्टटीका श्रीमद्भागवत वादावलि	२–०
वेदान्तचिन्तामणि ...	१–०
भक्तिहंस	१–०
पुष्टिप्रवाहमर्यादाभेद ...	०–६
सिद्धान्तसिद्धापगा ...	०–६
निर्णयार्णव	०–६
यमुनाष्टक श्रीपुरुषोत्तमजीकृत	०–४
यमुनाष्टक श्रीहरिरायजी कृत	०–४
बालबोध	०–४
,, श्रीदेवकीनन्दजीकृत	०–४
सिद्धांत मुक्तावली ...	०–२
सेवाकौमुदी	०–४
माण्डूक्योपनिषत् ...	०–८
दर्शनादर्श	०–२
स्तुतिपारिजात... ...	०–२
व्याख्यानरत्नावली ...	०–२

हिन्दी तथा गुजराती.	रु.आ.
वल्लभाख्यान (व्रजभाषा)	०–४
शुद्धाद्वैतदर्शन(प्रथमभाग)हिंदी	०–८
,, (द्वितीयभाग)हि.	०–८
,, (तृतियभाग)	०–८
मराठी भ्र. भा.	०–८
शुद्धाद्वैतदर्शन गुजराती ३ भाग	१–८
सेवाकौमुदी (हिन्दी)	०–४
शुद्धाद्वैतासिद्धांतसार (हिन्दी)	०–२
,, गुजराती ...	०–२
न्यासादेश (हिन्दी) ...	०–२
,, गुजराती ...	०–२
गीतातात्पय (हिन्दी) ...	०–२
,, गुजराती ...	०–२
गीता-भगवद्बोधिनी गुजराती टीका ...	१–४
सटीक नृसिंहोत्तरतापिन्युपनि.	०–६
षोडशग्रन्थहिन्दी टीका...	०–८

विशेष हाल जाननेके लिये दो पैसेका टिकट भेजकर बडा सूचीपत्र मंगाओ.

पुस्तक मिलनेका पता,

१ श्रीबालकृष्ण पुस्तकालय, बडामन्दिर भूलेश्वर, मुम्बई.
२ चुन्नीलाल बुकसेलर, बडामन्दिर, ३ रा भोईवाडा, मुम्बई.
३ पुष्टिमार्गसिद्धान्तकार्यालय, बडामन्दिर, भूलेश्वर मुम्बई.
४ श्रीविट्ठलनाथपाठशाला, मथुरेशमन्दिर, कोटा.